प्रतिदिन

न्यायिक सक्रियता

मेघालय उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सुदीप रंजन सेन ने निवास प्रमाण पत्र से संबंधित एक मामले की सुनवाई करते हुए सबको विस्मित करने वाली टिप्पणी करते हुए कहा है कि आजादी के समय जब देश का विभाजन हुआ, तब पाकिस्तान ने अपने को इस्लामिक राज्य घोषित किया था. भारत को भी उसी समय हिन्दू राष्ट्र घोषित कर देना चाहिए था. न्यायाधीश सेन को कानून और संविधान की सीमाओं में रहकर उस व्यक्ति के निवास प्रमाण पत्र से संबंधित मामले में अपना फैसला देना था, जिसे राज्य सरकार ने खारिज कर दिया था. लेकिन न्यायाधीश महोदय ने ऐसी टिप्पणी की, जिसका इस मामले से कोई लेना-देना नहीं था. न्यायाधीशों को ऐसे फैसले और टिप्पणियों से बचना चाहिए जिनकी प्रासंगिकता और न्यायिक सीमा संदिग्ध हो. भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना करता है, और यह संविधान की आत्मा या मूल ढांचा है. मूल ढांचे में बदलाव या संशोधन करने के मामले में 1973 में सुप्रीम कोर्ट ने अपना महत्त्वपूर्ण निर्णय दिया था, जो आज भी तमाम अंतर्विरोधों के बावजूद कायम है.

यह निर्णय केशवानंद बनाम केरल राज्य के नाम से जाना जाता है. इस मामले में सुप्रीम कोर्ट के 13 न्यायाधीशों की पीठ ने अपने संवैधानिक रुख में संशोधन करते हुए कहा था कि संविधान संशोधन के अधिकार पर एकमात्र प्रतिबंध यह है कि इसके जरिए संविधान के मूल ढांचे को क्षति नहीं पहुंचनी चाहिए. जाहिर है कि देश के कानून के दायरे में रहकर ही न्यायाधीशों को अपना फैसला देना चाहिए. लेकिन विडंबना है कि कई बार अदालतें अपनी सीमाओं और शक्तियों का विस्तार करते हुए फैसला देती हैं, जिसे ₹शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत' का उल्लंघन माना जाता है. पश्चिमी विचारक मांटेस्कयू इस सिद्धांत के प्रवर्तक रहे हैं, जिन्होंने लोकतंत्र की सफलता के लिए इसके तीनों अंगों न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के बीच पूरी तरह शक्तियों का बंटवारा करने का विचार प्रस्तुत किया था. हालांकि नागरिकों को यह बहस करने का संवैधानिक अधिकार है कि भारत को किस तरह की शासन प्रणाली चाहिए. वसंत साठे ने संसदीय प्रणाली बनाम अध्यक्षात्मक प्रणाली पर बहस की शुरूआत की थी. इसी तरह भारत के लिए हिन्दू राष्ट्र, धर्मनिरपेक्ष गणराज्य, सर्वहारा का अधिनायकत्व या मार्क्सवादी राज्य में से कौन-सी शासन प्रणाली बेहतर होगी, इस पर नागरिकों को विचार-विमर्श करने की आजादी है, लेकिन न्यायाधीशों को चाहिए कि वे न्याय के ढांचे के तहत ही फैसला दें.

इंटरनेशनल मीडिया

महिलाओं के लिए बढ़ती चिंता

इस साल का मिस नेपाल का खिताब जीतकर श्रृंखला खतिवदा जब मिस वर्ल्ड प्रतियोगिता के लिए चीन रवाना हुईं, तो सोशल मीडिया ने उन्हें हाथों-हाथ उठा लिया. बड़े पैमाने पर मिले ऑनलाइन सपोर्ट ने उन्हें न सिर्फ मल्टीमीडिया अवॉर्ड के रूप में एक और तमगा दिलाया, बल्कि चेपांग कम्युनिटी के प्रति उनकी करुणा और प्रतिबद्धता को एक ऐसे आदर्श के रूप में पेश किया गया, जो अपने आप में खिताब दिलाने का बड़ा आधार बनता. लेकिन ज्यादातर मिस नेपाल खतिवदा जैसी भाग्यशाली नहीं रही हैं. वह तो खुलेआम ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के दुरुपयोग और इसका शिकार बनने की शिकायतें करती रही हैं और उनकी शिकायतें जारी हैं. उन्हें ट्रोल किया जाता रहा है. ज्यादातर टिप्पणियां तो इतनी अपमानजनक हैं कि यहां दोहराया भी नहीं जा सकता.

दरअसल ऑनलाइन उत्पीड़न ऐसी महामारी बन चुका है कि अब इसे कानूनी व सामाजिक, दोनों ही स्तरों पर गंभीरता से लेने की जरूरत है. ऑनलाइन स्पेस को तो खासतौर से महिलाओं के लिए अतिरिक्त सुरक्षित बनाना होगा. सिर्फ काठमांडू के आंकड़े बताते हैं कि 2017 में साइबर अपराध के कुल मामलों में आधे से ज्यादा महिला उत्पीड़न के हैं. साल, 2013 में यह संख्या महज 91 थी, जो अगले साल 221 पर पहुंची और उसके अगले साल 769 तक पहुंच गई. इसके पीछे हमारा पुराना कानून भी जिम्मेदार है, जो साइबर उत्पीड़न से महिलाओं की सुरक्षा पर मौन है.

साइबर आर्थिक अपराधों के लिए बने कानून से ही उत्पीड़न के मामले भी तय हो रहे हैं, जबकि महिला उत्पीड़न पर अलग से बात होनी चाहिए. आखिर पासवर्ड हैकिंग और किसी महिला को लंबे समय के लिए मानसिक यंत्रणा में डालने वाले मामलों में एक ही कानून कैसे संभव है? तब जबकि इंटरनेट की दुनिया हर दिन उनके लिए नई मुसीबतें खड़ी कर रही हो. ऐसे में, इससे निपटने के लिए अलग से सख्त कानून की दरकार है. ऐसा कानून, जो महिला की गरिमा सुरक्षित रखते हुए उन्हें न्याय दे सके. महिला उत्पीड़न किसी भी कीमत पर रुकना ही चाहिए.

THE KATHMANDU POST

काठमांडू पोस्ट, नेपाल.

आज का सुविचार

रिश्ते तोड़ने तो नहीं चाहिए लेकिन, जहाँ, कदर न हो वहां निभाने भी नहीं चाहिए.

सात दशकों के बाद भी...

क्या यही है 'परिपक्व लोकतंत्र'?

पाँच राज्यों के चुनाव परिणाम आ गये हैं. चुनाव पूर्व का ओपीनियन पोल' चुनाव के तुरंत बाद का एक्जिट पोल' और अब वास्तविक परिणाम' आपके सामने है. मैं यहाँ पर परिणामों का विश्लेषण नहीं कर रहा हूँ. ये सब पोल' अनुमान के कितने नजदीक थे, सही थे, या आश्चर्य जनक थे, इस संबंध में भी कोई विशेष मूर्धन्य. विवेचना अभी नहीं कर रहा हूँ,. जो पढ़ा-समझा, मतदाता के आचार-विचार व हाव-भाव पढ़ने को मिले, उसका सही आकलन करने का गंभीर प्रयास कर रहा हूँ.

इस चुनाव के दौरान प्रदेश के चुनावी क्षेत्रों में जब मैं घूमा, तब मुझमें यह एहसास जागा कि क्या यह सही वास्तविक लोकतंत्र है? क्या यह वही लोकतंत्र हैं, जिसकी शान में हम पूरे विश्व में अपनी पीठ थपथपाते नहीं थकते हैं. सही लोकतंत्र का वास्तविक मतलब तब ही सार्थक माना जा सकता हैं, जब चुनाव के दौरान प्रत्येक मतदाता तात्कालिक रूप से निर्मित किये गये एक छलावा से प्रभावित हुये बिना पिछले पांच सालों के स्वयं के उम्मीदवार के प्रति अनुभव तथा उम्मीदवार व पार्टी की कार्यकुशलता व कार्य क्षमता के आधार पर सही पार्टी व व्यक्ति (उम्मीदवार) का चुनाव कर सकें. लेकिन यथार्थ में कई बार ऐसी विरोधाभासी परिस्थिति निर्मित हो जाती है, जब पार्टी व उम्मीदवार के संबंध में परस्पर विपरीत विचार भाव व आकलन की स्थिति बन जाती है. तब ऐसे में मतदाता के सामने एक दुविधा पूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि वह पार्टी को चुने या व्यक्ति (उम्मीदवार) को.

यदि वह पार्टी को चुनता हैं तब उसका उम्मीदवार उसकी नजर में खरा नहीं उतरने के कारण अगले पांच वर्षो के लिये उसकी नजर में वह अनुपयुक्त सिद्ध होता है. फिर भी, उसके पास कोई विकल्प नहीं रहने के कारण पार्टी को चुनने के परिणामतः वह ₹अनुपयुक्त' उम्मीदवार के पक्ष में मत देता है. ठीक इसके विपरीत योग्य व सही व्यक्ति के अनुपयुक्त पार्टी का उम्मीदवार रहने की स्थिति में उसकी गलत पार्टी को चुनने की मजबूरी बनी रहेगी.

प्रत्येक स्थिति में मतदाता एक गलत उम्मीदवार अथवा पार्टी को चुनने के लिए मजबूर होगा जिसके कारण आने वाले पांच वर्षो के कार्यकाल के लिए अपनी उम्मीदों की पूर्ति न हो पाने की जोखिम उसे उठानी पड़ सकती हैं. हमारे लोकतंत्र में इस प्रकार की कोई सटीक व्यवस्था नहीं है कि मतदाता सही पार्टी एवं सही उम्मीदवार दोनो का एक साथ चयन कर सके. वर्तमान व्यवस्था के तहत आम चुनाओं में कई बार व्यक्तिगत निष्ठा के आधार पर मतदाता चुनाव करता है जिसके परिणाम स्वरूप या तो लोकप्रिय पार्टी सत्ता से बाहर हो जाती है अथवा गलत उम्मीदवार चुन लिया जाता है.

बात यही तक सीमित नहीं रह जाती है. लोकतंत्र के सिक्के का दूसरा पहलू स्वयं मतदाता का लोकतंत्र की परीक्षा में खरा उतरना भी है. हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मतदाता को एक पूर्ण आदर्श व्यक्ति मान लिया गया है, जो गलत है. वर्तमान चुनावी व्यवस्था में यह मानकर चला गया है कि प्रत्येक मतदाता स्व-विवेक से, संपूर्ण ईमानदारी पूर्वक, बगैर किसी लोभ लालच अथवा या बाहुबल के भय, समाज व प्रदेश के हित में तथा उनके सतत विकास के लिये ही लोकतंत्र को मजबूत करने के लिये अपने मतदान का प्रयोग करेगें. यह एक आदर्श अवधारणा एवं अनुमान है, जो होना भी चाहिये. परन्तु वास्तविकता में क्या मतदाता इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति करता है?

अधिकांश मामलो में आज भी इसका उत्तर नहीं ही होगा. क्या यह अधिकार उस उम्मीदवार के पास भी नहीं होना चाहिए कि वह अपने मतदाता से उसी ताकत से वे प्रश्न पूछे जो मतदाता उससे पूछता रहा है? यही लोकतंत्र का वास्तविक खतरा भी हैं.

लोकतांत्रिक व्यवस्था में चरित्र, ईमानदारी, भयमुक्त भष्ट्राचार रहित सर्वधर्म, सर्वसमाज व्यवहार का उत्तरदायित्व क्या केवल उम्मीदवार का ही है, और मतदाता को केवल इस विषय में अनेकानेक प्रश्न करते रहने का अधिकार ही होना चाहिए? क्या मतदाता का कोई दायित्व नहीं होना चाहिय? क्या उम्मीदवार को भी मतदाता से उपरोक्त बातों के लिये सवाल पूछने व उस पर प्रश्नवाचक चिन्ह लगाने का अधिकार तथा राज्य व राष्ट्र के हित में अपेक्षा करने का अधिकार नहीं होना चाहिए? इसीलिए मेरे जेहन में यह ज्वलंत प्रश्न उत्पन्न हुआ कि हमारा लोकतंत्र इन 70 सालो में क्या परिपक्व हो गया है?

एक बात और! सामान्य रूप से मतदाता इस भाव से मत देता है कि वह उम्मीदवार पर कोई उपकार कर रहा है, साथ ही वह उसके प्रतिफल में कुछ पाने की चाह भी रखता है. वह लोकतंत्र के महायज्ञ में मत डालना मात्र अपना कर्तव्य नहीं मानता है. इसीलिए आज भी हमारा लोकतंत्र संपूर्ण रूप से परिपक्व नहीं है बल्कि वास्तविक दृष्टि में धरातल पर अधूरा है.

₹लोक' व ₹तंत्र' को मिलाकर लोकतंत्र तो बन गया. लोगो को मतदान का अधिकार भी मिल गया. लेकिन वर्तमान में तंत्र ने लोक को सामान्य तथा भ्रष्ट आचरण की ओर धकेल दिया. इसीलिए प्रदेश व देश के

हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मतदाता को एक पूर्ण आदर्श व्यक्ति मान लिया गया है, जो गलत है. वर्तमान चुनावी व्यवस्था में यह मानकर चला गया है कि प्रत्येक मतदाता स्व-विवेक से, संपूर्ण ईमानदारी पूर्वक, बगैर किसी लोभ लालच अथवा या बाहुबल के भय, समाज व प्रदेश के हित में तथा उनके सतत विकास के लिये ही लोकतंत्र को मजबूत करने के लिये अपने मतदान का प्रयोग करेगें. यह एक आदर्श अवधारणा एवं अनुमान है, जो होना भी चाहिये. परन्तु वास्तविकता में क्या मतदाता इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति करता है?

गौरवशाली भावना पूर्ण तथ्य से लबालब वास्तविक लोकतंत्र अभी तक नहीं बन पाया. यह वास्तविकता है, जो हमने चुनाव में देखी है. आज भी लोग विशेष जाति, वर्ग, धर्म व क्षेत्र एवं समाज के आधार पर दबाव, ड़र व लालच की पूर्ति से वोट देते है. धनबल, बाहुबल और व्यक्तिगत द्वेष, भविष्य के स्वार्थ की आशा व कल्पना में वोट देने को मजबूर होते है.

क्या लोकतंत्र तभी स्वस्थ्य नहीं होगा जब मतदाता सिर्फ और सिर्फ अपने स्व-विवेक से अपने मन की बात को निष्पक्ष रूप से ईवीएम मशीन की बटन दबाकर व्यक्त कर सके. जहां चुनाव के दौरान मतदाता को अनैतिक व गैर कानूनी रूप से प्रभावित न किया जा सके. कुल मिलाकर आदर्श मतदान करने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी मतदाता की रहे यह स्थिति बनाने का उत्तरदायित्व सिर्फ और सिर्फ मतदाता का ही है और इस विषय का उत्तर गर्भ में है जो सिर्फ मतदाता ही दे सकता हैं. जब तक मतदाता से स्पष्ट आदर्श व्यवहार नहीं मिल जाता हैं तब तक मतदाता द्वारा चुने गये उम्मीदवार को भी मतदाता पर उंगली उठाने का अधिकार माना जाना चाहिए.

राजतंत्र के समय कहावत प्रचलित थी, ₹यथा राजा तथा प्रजा'. चूँकि लोकतंत्र में प्रजा ही राजा (नेता) की चुनती है, अतः वर्तमान में उक्त कहावत का स्वरूप बन गया है, ₹यथा प्रजा तथा नेता (राजा)'. इसलिए जब तक प्रजा अपने आप को हर प्रकार से स्वच्छ नहीं बना लेती तब तक केवल नेता पर दोषारोपण करते रहने का कितना और क्या औचित्य? एक नागरिक व मतदाता होने के नाते प्रत्येक का यह कर्तव्य है कि वह इस पर गहनता से विचार कर स्वयं का आत्मविश्लेषण करे, तभी सार्थक व परिपक्वता की ओर बढ़ता हुआ लोकतंत्र स्थापित हो पायेगा.

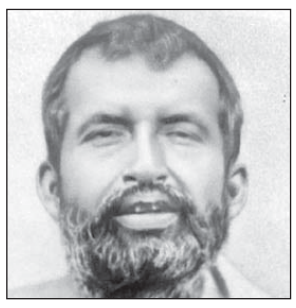

राजीव खण्डेलवाल.

प्रतिदिन

अपना पता

एक बार रामकृष्ण परमहंस के पास एक श्रीमंत आकर बोले, सुना है आपके पास मां आती हैं, आप उनसे बातें भी करते हैं. रामकृष्ण बोले, हां, आता हैं...जिस तरह से तुम मेरे साथ बातें कर रहे हो, उसी प्रकार मैं उनके साथ भी बातें करता हूं. मां कब आती हैं? श्रीमंत ने पूछा. उनका आगमन तय नहीं होता, जब उनकी इच्छा होती है तब आ जाती हैं, रामकृष्ण सहज भाव से बोले. श्रीमंत बोला, स्वामीजी मेरा एक काम करना, इस बार जब मां आएं तो कहना कि मेरे पास भी पधारें. आप तो जानते ही हैं कि मैं बहुत व्यस्त रहता हूं, इसलिए यहां बैठ कर प्रतीक्षा नहीं कर सकूंगा. रामकृष्ण बोले, ठीक है, अगली बार मां जब भी मुझे मिलेंगी तो अवश्य कहूंगा, मगर वह तुम्हें मिलने के लिए कहां आएंगी. उस श्रीमंत ने रामकृष्ण को अपना विजिटिंग कार्ड बढ़ाया. रामकृष्ण बोले, नहीं नहीं, मुझे तुम्हारी कोठी का नहीं तुम्हारा एड्रेस चाहिए, बस वह दे दो. श्रीमंत उलझन में फंस गया, बोला, मेरा पता का मतलब? हां, तुम्हारा पता, तुम कौन हो मां को तो तुम्हारा पता देना पड़ेगा, तभी तो वह जा पाएंगी. रामकृष्ण ने विजिटिंग कार्ड वापस लौटा दिया और कहा, ये एड्रेस तो आपकी कोठी, ऑफिस और फैक्ट्री के हैं.

मां वहां थोड़े ही जाएंगी. वे तो तुम्हारे पास जाएंगी, इसलिए अपना पता बताओ. श्रीमंत को फिर भी समझ नहीं आया, मेरा पता का मतलब? तब रामकृष्ण ने समझाया, तुम्हारे पते का मतलब है, तुम्हारे देह के भीतर जो आत्मा बैठी है, उसका पता. जिस दिन तुमको उसका पता मिल जाएगा, उस दिन मां बिना बुलाए तुम्हारे पास आ जाएंगी. अचानक श्रीमंत को सब कुछ समझ में आ गया. वह रामकृष्ण के चरणों पर गिर कर रोने लगा, उसका सारा अहंकार पिघल गया. उस दिन से वह अपना सही ठिकाना ढूंढने के लिए एक साधक की तरह जीवन बिताने लगा.

नेटीजन

बेरहम बॉर्डर

हमसे अच्छे तो वे मछुआरे हैं, जो नाव के इधर-उधर होते ही कराची या गुजरात की जेल पहुंच जाते हैं.

सुनते हैं कि वरिष्ठ पत्रकार बरखा दत्त और सुहासिनी हैदर को कराची में किसी कॉन्फ्रेंस में आना था. मगर वक्त पर वीजा नहीं मिला. मुझे मेरठ की चौधरी चरण सिंह यूनिवर्सिटी से एक कॉन्फ्रेंस का बुलावा था. मेरे ट्रैवल एजेंट ने कहा, कॉन्फ्रेंस के न्योते की कॉपी और जिसने यह न्योता भेजा है, उसके घर के पते का कोई बिल या उसके आधार कार्ड की कॉपी मंगवा लें, मैं आपकी वीजा एप्लिकेशन भर देता हूं, आगे आपकी किस्मत. मेरा मेरठ जाने का जज्बा वहीं झाग की तरह बैठ गया. सुना है कि करतारपुर बिना वीजे के आया-जाया जा सकेगा, मगर इसके लिए भी सिख होने की शर्त है. मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह उन यात्रियों में फिर भी शामिल न होंगे, क्योंकि उन्हें शक है कि हो न हो इस मेहरबानी के पीछे आईएसआई का कोई बहुत बड़ा मनसूबा है. इधर हमारे धार्मिक राजनेता मौलाना फजलुर्रहमान को भी यकीन है कि करतारपुर कॉरिडोर यहूदी लॉबी के इशारे पर अहमदी समुदाय की सुविधा के लिए खोला गया है, ताकि वे कादियान और रव्वा आ-जा सकें.

जब ऐसे-ऐसे महान नेता ऐसी-ऐसी बातें करते हैं, तो मुझ जैसों को तो बिल्कुल शोभा नहीं देता कि भारत यात्रा के लिए अपनी मुश्किलात का रोना रोऊं या इस पर मातम करूं कि बरखा-सुहासिनी को वक्त पर वीजा क्यों नहीं मिला? हमसे अच्छे तो वे मछुआरे हैं, जो नाव के इधर-उधर होते ही कराची या गुजरात की जेल पहुंच जाते हैं.

बीबीसी में वुसतुल्लाह खान.

उलट बांस...

जब अधिक उपज ही बन जाती है घाटे का सौदा

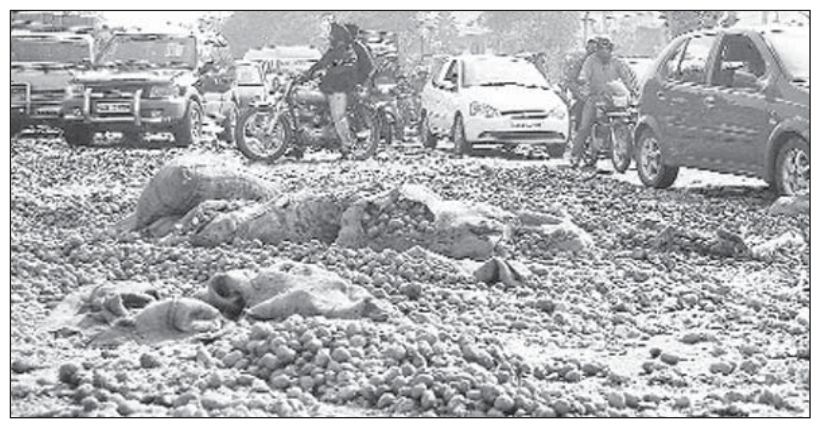

पूरे देश से शानदार उपज की खबरें मिल रही हैं, लेकिन यह उपज ही किसान को परेशान कर रही है.

वैसे तो यह हर कुछ साल बाद होता है. उत्तर प्रदेश के बाराबंकी में किसानों ने एक बार फिर अपना आलू सड़क पर फेंक दिया. इस बार फिर आलू की अच्छी फसल हुई है जबकि अकेले बाराबंकी जिले के कोल्ड स्टोरेज में 30 हजार बोरे आलू पिछले साल के पड़े हैं. बाजार में नया आलू बमुश्किल 150 से 200 रुपए क्विंटल यानी डेढ़ से दो रुपये किलो बिक रहा है. जबकि कोल्ड स्टोरेज से माल निकालकर केवल परिवहन करने का व्यय 300 रुपए क्विंटल पड़ रहा है. इसकी बजाय अगर किसान अपने खेत की मिट्टी भी बेचता, तो शायद आलू से बेहतर दाम मिलते.मध्य प्रदेश के नीमच में यही हाल प्याज का है. दिसम्बर के पहले दिन वहां सामान्य प्याज की कीमत 50 पैसे किलो मिल रही थी. हताश किसान अपना माल वैसा ही मंडी में छोड़कर चला गया. रतलाम जिले की सैलाना मंडी में प्याज, लहसुन और मटर की इतनी आवक हुई कि न तो खरीदार मिल रहे हैं और न ही मंडी में माल रखने की जगह है. राजस्थान के झालावाड़ में लहसुन का उत्पादन कोई 27 हजार एकड़ में होता है. वहां फसल तो बहुत बढ़िया हुई, लेकिन माल को इतने कम दाम पर खरीदा जा रहा है कि लहसुन की झार से ज्यादा आंसू उसके दाम सुनकर आ रहे हैं. पूरे देश में कहीं टमाटर, तो कहीं मिर्ची की शानदार फसल लागत भी नहीं निकाल पा रही है. कहींकहीं से फसलों को खेतों में ही जला देने की खबरें तक आ रही हैं..

हम न जाने कब से अपने किसानों को अधिक अन्न उपजाओ का मूलमंत्र देते आए हैं. उसे हमेशा यही बताया जाता है कि खेतों में उत्पादन बढ़ेगा, तो उसकी खुशहाली बढ़ेगी. लेकिन जब वाकई उत्पादन बढ़ता है, तो किसान ही सबसे ज्यादा घाटे में रहता है. यह बात अलग है कि जब उत्पादन कम होता है, तब भी किसान को कोई खास फायदा नहीं मिलता, फिर भी वह स्थिति अक्सर अधिक उपज हो जाने से अच्छी होती है. वे न तो अपने गोदाम में रखे माल को बेचना जानते हैं और न ही मंडिया उनके हितों की संरक्षक होती हैं. किसी भी इलाके में स्थानीय उत्पाद के अनुरूप प्रसंस्करण उद्योग हैं नहीं. इसीलिए लहलहाती फसल किसान के चेहरे पर किसी तरह का मुस्कान नहीं ला पाती.

आज जरूरत यह है कि खेतों में कौन-सी फसल कितनी उगाई जाए, पैदा फसल का एक-एक कतरा श्रम का सही मूल्यांकन करे; इसकी नीतियां तालुका या जनपद स्तर पर ही बनें. साथ ही प्रसंस्करण के कारखाने छोटी-छोटी जगहों पर लगें. आलू किसानों को कर्ज के भार से बचाने के लिए सरकारी संस्थाओं को पहले वेयर हाउस में रखा माल न्यूनतम मूल्य पर खरीद कर उसे राशन की दुकानों या मिड डे मील या आपदा राहत वगैरह में तत्काल खपाने पर विचार करना चाहिए. नष्ट होती फसल केवल पैसे का अपव्यय ही नहीं है, यह श्रम, प्रकृति और देश में हर दिन भूखे सो रहे लाखों लोगों का अपमान भी है. देश की कृषि, खाद्य सुरक्षा और आबादी के बहुमत के लिए खराब भविष्य का संकेत भी.

पंकज चतुवेर्दी.

आपकी बात

चोरियां तो तब भी होती थीं लेकिन-

कोई वक्त था जब ग्रामीण भागों के बड़े धन्नासेठों के यहां डाके पड़ा करते है, और वह भी पत्र भेजकर. यानी सावधान कर डाकू आते थे. निजाम के वक्त जब अमरावती में पेंढ़ारियों का आक्रमण हुआ था, उसका भी पत्र भेजा गया था. और फिर रात के अंधेरों में चुपके से चोरी का वक्त आया. और अब दिन-दहाड़े चोरियों का समय है. तब तो सेठ-साहूकार लठ्ठबाजों का ताफा पाला करते थे. आज तो सिपाही से लेकर विभागीय पुलिस आयुक्त तक की फौज खड़ी है. हर बड़े पद पर उच्चवेतनभोगी अधिकारी तैनात हैं. फिर भी अगर चोरियां बढ़ती जा रही हैं, तो इसे आमलोगों का दुर्भाग्य और चोरों का भाग्य ही समझना चाहिये.

देश की बात जाने दीजिये, अंतर्राष्ट्रीय रिपोर्ट में भी भारत के पुलिस विभाग में रिश्वत का पैमाना सर्वोच्च स्तर पर बताया गया है. यहां तो गुनाह का पैमाना भी दिये जा रहे पैसों के पैमाने से तय होता है. कभी यह भी होता है कि जिसके घर चोरी हुई, उससे यूं पूछताछ होती है, जैसे उसके घर चोरी होना उसका ही गुनाह हो. सामान्य समझ तो यही है कि गुनाहगारों को प्रोत्साहित करना भी गुनाह है. कोई ₹चोर' पकड़ा तो जाये, फिर वकीलों की फौज क्या करती है? उसके पक्ष में किस तरह की दलीलें की जाती हैं? लगता है, पीड़ित ही अपने पीड़ित होने का गुनाहगार है. क्या आज हम इन्हीं सारी परिस्थितियों के बीच जीने को मजबूर नहीं हैं?

जुगलकिशोर राठी,अमरावती.

प्रतिदिन अखबार

यह पत्र मालिक, प्रकाशक, सम्पादक नानक आहूजा द्वारा देविका वेब प्रिंटर्स, राजापेठ, अमरावती से मुद्रित कर 'प्रतिदिन अखबार' कार्यालय, देविका परिसर, ब्राह्मण सभा के पीछे, दरोगा प्लॉट, राजापेठ, अमरावती 444 606 से प्रकाशित किया है. फोन-0721-2560155/56/57/58 फैक्स-0721-2677708 E-mail :- pratidinnews@gmail.com 'प्रतिदिन अखबार' में प्रकाशित होनेवाले विभिन्न लेख, पत्र, साहित्य, लेखकों, कवियों आदि के विचारों या तथ्यों पर आधारित होते हैं. इन लेखकों के विचारों अथवा तथ्यों से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है. संपादक पर मात्र सम्पादकीय लेखों का ही दायित्व है. संपादक-नानक आहूजा, समाचार संपादक-प्रवीण आहूजा.